REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 10 | ISSUE - 9 | JUNE - 2021

मन्नू भंडारी की आत्मकथा 'एक कहानी यह भी' में चित्रित स्त्री के विविध रूप

घाडगे वनिता अशोक
एम.ए.एम.एड्.सेट.एम.फिल

सन 2006 में प्रकाशित मन्नू भंडारी की 'एक कहानी यह भी' यह इक्कीसवीं सदी की अत्यंत प्रसिध्द आत्मकथा है। तो यह आत्मकथा ही पर मन्नू भंडारी इसे अपनी आत्मकथा मानने के लिए तैयार नहीं हैं। वह अपनी आत्मकथा के स्पष्टीकरण में स्पष्ट लिखती है, ''यह मेरी आत्मकथा कतई नही है, इसलिए मैंने इसका शीर्षक भी 'एक कहानी यह भी' ही रखा है। जिस तरह कहानी अपनी जिंदगी का अंश मात्र ही होती है, एक पक्ष, एक पहलू, उसी तरह यह भी मेरी जिंदगी का एक टुकडा मात्र ही है, जो मुख्यतः मेरे लेखकिय व्यक्तित्व और मेरे यात्रा लेखन पर केंद्रित हैं।''[1]

आत्मकथा आखिर आत्मकथाकार का जीवन चरित्र है। जीवन की अनेक कहानियों का संकलन ही होती है। मन्नू भंडारी आगे लिखती है, ''आज तक मैं दूसरों की जिंदगी पर आधारित कहानियाँ ही रचती आई थी, पर इस बार मैंने अपनी कहानी लिखने की जुर्रत की है। है तो यह जुर्रत ही क्योंकि हर कथाकार अपनी रचनाओ में भी दूसरों के बहाने से कहीं न कहीं अपनी जिंदगी के अपने अनुभव के टुकडे ही बिखेरता रहता है। कहीं उसके विचार और विश्वास गुंथे हुए होते हैं, तो कहीं उसकी उल्लास और अवसाद के क्षण ... कही उसके सपने और उसके आकांक्षाएँ अंकित है, तो कहीं धिक्कार और प्रताडता के उद्‌गार।''[2]

अपनी इस आत्मकथा में मन्नू भंडारी ने अपने स्वयं को विविध रूपो में पाठकों के सामने लाया है। कभी वह बेटी के रूप में सामने आती है, तो कभी छात्रा के रूप में, पत्नी के रूप में, कभी सहेली के रूप में, तो कभी माँ के रूप में, कभी पाठक के रूप में तो कभी साहित्यकार के रूप में कभी अध्यापिका के रूप में आती है, तो कभी सहेली के रूप में। मन्नू किसी भी रूप में आये सबकी भाँति रही है। जिस किसी भी रूप को निभाया है प्रामाणिकता से निभाया है।

बेटी के रूप में मन्नू भंडारी :

सुखसंपतराय को दो बेटियाँ थी सुशिला और मन्नू। वे मन्नू से अधिक सुशिला को चाहते थे, क्योंकि सुशिला गोरी, सुंदर और बातुनी थी, तो मन्नू काली और अबोल थी। जब सुशिला का विवाह हो गया तब मन्नू पिताजी चाहने लगे। जब भी कोई साहित्यकार, राजनेता या समाज सेवक घर में आते और गरमा गरम चर्चा करते तो मन्नू घंटो चर्चा सुनती रहती पर कुछ बोलती नहीं। वह पिता और माता का आदर करती थी। सुखसंपतराय जी आधुनिक सोचनेवाले पिता थे। उन्होंने अपनी लडकियों को आजादी भी दी थी। पर उनकी आजादी की सिमा थी। यह सिमा यह थी कि वे अपनी उपस्थिती में मन्नू को घर में आए लोगों के बीच उठने –बैठने, जानने, समझने का अधिकार देते थे। पर शहर की सड़कों पर हाथ उठाकर नारे लगाना , लडको के साथ जुलूस में रास्ता नापना उनको बर्दाश्त नहीं होता था। मन्नू के खुन में ही. देशभक्ती थी। मन्नू का देशभक्त

स्वभाव जुलूस में भाग लेने के लिए मजबुर कर रहा था। 'मन्नू ने क्रोध से सबको थरथरा देनेवाले पिताजी से टक्कर लेने का जो सिलसिला तब शुरू हुआ था, राजेंद्र से शादी की तब तक चलता रहा।[3]
मन्नू अपनी माँ को बहुत चाहती थी। पर उसका शीर्षक स्वभाव उसे बिलकुल पसंद नहीं था। इसी कारण माँ का प्रभाव मन्नू पर नहीं दिखायी देता न माँ कभी उसका आदर्श रही।

बचपन से ही पिताजी का मन्नू पर प्रभाव था। बचपन से पिताजी के प्रभाव के कारण ही तो उन्होंने सामाजिक स्थिती का ज्ञान, उचित–अनुचित की पहचान, परिवेशगत गलत स्थितियो के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त करना उनका स्वभाव बन गया था। लेखन की प्रेरणा भी मन्नूजी को पिता के घर से ही मिली। पिता के घर में साहित्यकारों का आना – जाना सदा रहता था। साहित्य पर चर्चा भी होती थी। यह चर्चा सुनते– सुनते ही मन्नूजी के मन में साहित्य के प्रति रूचि निर्माण हो गई। पिताजी के निजी ग्रंथालय से प्रेमचंद के सारे उपन्यास कहानियाँ उन्होंने पढ़ ली। अनेक साहित्यकारों की रचनाएँ भी उन्होंने पढ़ी। पिताजी जिस प्रकार छोटी – छोटी बातो पर रियक्ट होते थे। मन्नू लिखती है, मैं हमेशा गलत बात के प्रति रियक्ट होती थी। व्यक्तिगत जीवन में हो या सामाजिक जीवन में जहाँ भी हो मेरी बहुत तीखि प्रतिक्रिया उसको लेकर हुआ करती थी।''[4]

पिताजी के घर से मिले लेखन के संस्कार पति के घर में भी जिवित रहे, इसलिए उन्हें विवाह और नौकरी के साथ साथ लेखन में कहीं विशेष कठिनाई का – सामना नहीं करना पड़ा।

छात्रा के रूप में मन्नू भंडारी :

मन्नू ने 1941 में इंटर की परिक्षा पास की। 1949 में बहिस्थ परीक्षक के रूप में कलकत्ता से बी.ए. किया।1952 में बहिस्थ परीक्षक के रूप में हिंदी में एम.ए.बनारस विश्वविद्यालय, काशी से किया। जब 1945 में दसवीं पास करके प्रथम वर्ष इंटर में सावित्री गर्ल्स हाइस्कूल में प्रवेश लिया तब वहाँ हिंदी की प्राध्यापिका शीला अग्रवाल थी। शीला जी ने बाकायदा मन्नू जी को साहित्य की दुनिया में प्रवेश करवाया। मन्नूजी की पढने में बहुत रूचि थी। ''मन्नूजी की साहित्य के प्रति रूचि देख उसे खुद चुन चुनकर पढने के लिए किताबें दीं........ पढी हुई किताबों पर बहसें की। दो साल बीते न बीतते साहित्य की दुनिया शरदचंद्र, प्रेमचंद से बढकर जैनेंद्र, अज्ञेय, यशपाल, भगवतीचरण वर्मा तक पहुँच गई और फैलती ही चली गई।''[5] छात्रा जीवन में ही मन्नू भंडारी का साहित्य पढना और उसपर चर्चा करने का यह सिलसिला बढ़ता चला गया। उनको यशपाल के उपन्यास और कहानियाँ अधिक अच्छी लगती थीं। यशपाल उनके प्रिय लेखक बन गए। वह लिखती है, ''मैने अपने हाथ खर्चे से बचाए हुए पैंसो से पहली बार यशपाल के दादा कामरेड और पार्टी कामरेड यह दो उपन्यास खरीदे और दो–तीन बार पढ़े भी। ''[6]

जैनेंद्र का 'सुनीता' उनको अधिक प्रिय लगा। अज्ञेय के 'शेखर एक जीवनी' तथा 'नदी के द्वीप' यह दो उपन्यास भी उन्होंने पढ लिये। जैनेंद्र का त्यागपत्र तथा भगवतीचरण वर्मा का 'चित्रलेखा' भी पढ़े और इन सारे उपन्यासोंपर शीलाजी के साथ चर्चा भी की।

मन्नू भंडारी के खून में ही देशप्रेम था, क्योंकि पिताजी कॉंग्रेस के सक्रिय कार्यकर्ता और समाजसेवक थे। छात्र जीवन में यशपाल के क्रांतीकारी उपन्यासो का प्रभाव था। सन 46–47 में गांधीजी के नेतृत्व में सारा देश अंग्रेजों के विरोध में रास्ते पर आ गया था। देशभर में प्रभातफेरियाँ, हड़ताले,जुलूस, भाषण हर शहर का चरित्र बन बया गया था। हर भारतीय देश प्रेम से ओत – प्रोत हो गया था। युवा तो सबसे आगे थे। मन्नू जी लिखती है, ''मैं भी युवा थी और शीला अग्रताल की जोशिली बातों ने रगों में बहते खून को लावे में बदल दिया था।''[7] मन्नू भंडारी ने अपनी दो साथियों के साथ अपने जोशिले भाषण से कॉलेज की सारी लडकियों में जोश भर दिया। उनकी एक आवाज पर पलभर में सारी लडकियाँ, कक्ष छोड़कर बाहर आती थी। पलभर में कॉलेज बंद हो जाता था। मन्नूजी शहर में जुलूस का नेतृत्व करती थी। वक्तृत्व कला तो उसके पास थी ही। अपने वक्तृत्व से और सच्चे देशप्रेम से सभी युवाओं में देशप्रेम भर देती थी। पिताजी ने एक बार मन्नू को कहा ''सारे कॉलेज की लडकियो पर इतना रौब है तेरा .... सारा कॉलेज तुम तीन लडकियों के इशारे पर चल रहा है? अगर तुम लोग एक इशारा कर दो क्लास छोडकर बाहर आ जाओ तो सारी लडकियाँ निकलकर मैदान में जमा होकर नारे लगाती हैं। तुम लोगों के मारे कॉलेज चलाना मुश्किल हो गया है, उन लोगों के लिए।''[8]

मन्नू भंडारी ने छात्र जीवन में मन लगाकर पढाई भी की, अनेक साहित्यिक पुस्तको को भी पढा. साहित्यिक चर्चाएँ भी कीं और देश की आजादी की लडाई में सक्रिय सहभाग ही नहीं लिया, युवाओं का नेतृत्व

भी किया, वह सभी अध्यापिकाओं की प्रिय छात्रा थीं। मेधावी, विनम्र और देशभक्त छात्रा होने के कारण सबकी लाडली भी थी।

प्रेयसी के रूप में मन्नू भंडारी

मन्नू भंडारी कलकत्ता में एक स्कूल में अध्यापिका बनी। पढने–लिखने का तो शोक उनको बचपन से था। साहित्यकारों के सहवास में वह बचपन से थी। साहित्यकारों और उनकी रचनाओं के प्रति आकर्षण भी था। एक बार स्कूल के ग्रंथालय के लिए ग्रंथ खरीदने थें स्कूल की मुख्याध्यापिका ने राजेंद्र यादव को स्कूल में बुलाया था और ग्रंथ का चयन करने की जिम्मेदारी मन्नू जी पर सौंप थी। ग्रंथ चयन करते समय उनकी प्रथम मुलाकात राजेंद्र यादव से हुई। राजेंद्र यादव को एक श्रेष्ठ साहित्यकार के रूप में पहले से ही मन्नू जी जानती थी। मुलाकातें बार – बार होती रही। मुलाकातो – मुलाकातो में दोस्ती हो गई। दोस्ती कब प्यार में बदल गई पता ही नहीं चला। पर जब भी यह दोनों आपस में मिलते साहित्य पर ही चर्चा करते। राजेंद्र श्रेष्ठ साहित्यकार थे, अच्छा लिखते थे , इसी कारण मन्नूजी उनकी ओर आकर्षित हो गई थी। कुछ ही महीनों में प्रेम, विवाह में बदल गया। अन्य प्रेमियों के समान इनके प्रेम में अश्लीलता या शारीरिक आकर्षण बिलकुल नहीं था। मन्नू भंडारी एक अच्छी उदयोन्मुख लेखिका थी। इस कारण भी राजेंद्र को वह भा गई। क्योंकि वह न गोरी थी, न अति सुंदर थी। स्वभाव से अच्छी थी। साहित्य के प्रति उसे प्रचंड रूचि थी और वह अच्छा लिखती भी थी। इसीलिए उनका प्रेम हो गया। प्रेमिका के रूप में अधिक दिन नहीं रहे। कुछ ही महीनों में उनका विवाह हो गया।

पत्नी के रूप में मन्नू भंडारी :

चाहे स्त्री हो या पुरूष विवाह मनुष्य जीवन में आवश्यक ही है। विवाह के बिना मनुष्य अधूरा ही रह जाता है। विवाह एक ऐसा लडडू है, जो खाए वह भी पछताए, जो न खाए वह भी पछताए। पर मनुष्य ने एक बार खाकर ही पछताना चाहिए।'' मन्नू भंडारी विवाह को एक ऐसा बंधन मानती है, जिसे आदमी स्वेच्छा से अपनाता है, यदि उसे वह बंधन कष्टकर लगे तो उसके पास बच निकलने का कोई रास्ता ही नहीं रह जाता।''[9] विवाह मानव जीवन की आवश्यकता है। विवाह के बिना मनुष्य को पूर्णतः प्राप्ति नहीं होती। पर अगर साथी अच्छा मिले तो जीवन सुखमय बन जाता है। पर साथी बूरा मिले तो जीवनभर विवाह करने की सजा भुगतनी पड़ती है। विवाह में एक अच्छा जीवनसाथी मिलना लॉटरी लगने के समान है। भारत में तो ऐसे नब्बे प्रतिशत पति – पत्नी है जिनका स्वभाव, आचार विचार भिन्न है। दोनों एक दूसरे से बिलकुल भिन्न होते है। पर सामाजिक बंधन के कारण एक साथ एक घर में रहते है, बेड पर सोते हैं, पर दोनों के मुँह दो तरफ होते है। हर मनुष्य आधा – अधूरा है। उसे अच्छा जीवनसाथी मिलने के बाद वह पूर्ण हो जाता है। पर अगर अच्छा जीवनसाथी नहीं मिला तो वह आधे से भी आधा हो जाता है।

मन्नू भंडारी भी ऐसा ही जीवनसाथी चाहती थी, जो उसके आधे अधूरे जीवन को पूर्ण बना दें। उसका व्यक्तिगत जीवन और साहित्यिक जीवन फले – फूले। जब राजेंद्र यादव के साथ उनकी प्रथम भेट हुई तब उनको लगा की राजेंद्र के रूप में उसे अच्छा जीवनसाथी मिल सकता है। उसने राजेंद्र के साथ पिताजी का विरोध होते हुए भी विवाह करने का निर्णय ले लिया। दोनों का एक दूसरे के प्रति गहरा प्रेम था। पर राजेंद्र प्रेम को प्रेम ही रहने देना चाहते थे। वे मन्नू के साथ विवाह नहीं करना चाहते थे।

क्योंकि पारिवारीक जिम्मेदारियों से वे डरते थे। विवाह संस्था पर उनका विश्वास नहीं था। दूसरी बात यह है कि दिल्ली की मिता नाम की सुंदर लडकी से उनका प्रेम था। राजेंद्र ने मोहन राकेश के माध्यम से मन्नू भंडारी को समझाने का प्रयास किया। मोहन राकेश ने मन्नू भंडारी को चिट्ठी में स्पष्ट लिखा था '' मन्नू तुमको लेखक से शादी करने की बात दिमाग से निकाल देनी चाहिए। हम लोगो का क्या है, आज घर है कल फुटपाथ पर बैठकर रूमाल भी बेचने पड सकते है। आज खाना है, तो कल भूखा भी रहना पड सकता है। निहायत अनिश्चित अस्थिर जिंदगी के साथ बंधकर तुम कभी सुखी नहीं रह सकोगी।''[10] मन्नू जी राजेंद्र को जानती थी। उनके फक्कड स्वभाव से उसका परिचय था। वे कुछ भी नहीं कमाते यह भी वह जानती थी, फिर भी राजेंद्र से विवाह करने का निर्णय मन्नू भंडारी ने ले लिया। राजेंद्र जैसे लेखक से घर परिवार की जिम्मेदारी उठाने की अपेक्षा उसने कभी नहीं की। ऐश – आराम, धन दौलत की भी अपेक्षा नहीं की। बस वह चाहती थी कि अटूट

विश्वास, एक निर्द्वन्द्व आत्मीयता और गहरी संवेदना जिसके चलते वे दोनों खूब लिख सके। अच्छी अच्छी–रचनाओं का सृजन कर सके।

मन्नू भंडारी का राजेंद्र यादव के साथ विवाह हो गया। न चाहते हुए भी राजेंद्र यादव शीला जी और जीजाजी दबाव में आकर विवाह के लिए तैय्यार हो गये। मन्नू भंडारी पूर्ण समर्पण के लिए तैय्यार थी राजेंद्र के लिए हर मुसीबत झेलने का मन बना लिया था उसने वह घर की सारी आर्थिक जिम्मेदारी उठाने के लिए तैय्यार थी। क्योंकि उसके पास एक नौकरी थी, अच्छा वेतन था जिससे परिवार ठीक तरह से चल सकता था। पर विवाह की पहली रात में ही मन्नू भंडारी के सारे सपने टूटकर चकनाचूर हो गये। वह लिखती हैं, '' ओफ, वह रात। कलकत्ता में साथ जिंदगी शुरू करते ही लेखक की अनिवार्यता और आधुनिकता के नाम पर समानांतर जिंदगी का नुक्सा ही नहीं पकडाया था राजेंद्र ने बल्कि अपनी अलमारी बक्सो और दराजो के तालो की ऐसी चौकसी आरंभ कर दी थी कि मेरा तो दम ही घुटने लगा था। नहीं, यह तो शादी के पहले वाले राजेंद्र नहीं है।''[11]

एक दिन जब बक्से की चाबी मन्नू भंडारी के हाथ लग जाती है। वह बक्सा खोलकर देखती है। पत्रों और डायरियों से भरा बक्सा। डायरी और पत्रो को पढते हीं उनके पैर के नीचे से जमीन सरकने लगी। वह लिखती है, ''आँसूओ के बीच पढ़ते जा रही थी और लग रहा था जैसे मेरे पाँव के नीचे की जमीन ही सरकती जा रही है। समांतर जिंदगी के नुस्खे ने छत तो पहले ही अलग कर दी थी, अब जमीन भी खींच ली। इतना बडा धोखा... ऐसा छल अब इस संबंधहीन जिंदगी को लेकर कहाँ खडी रहूँगी .... कैसे खडी रहूँगी.............. और खडी भी क्यों रहूँ? नहीं, जो काम राकेश नहीं कर पाए ..... ठाकौर साहब नहीं कर पाए, उसे अब मुझे ही करना है। राजेंद्र को अपने से मुक्त कर देना है या फिर अपने को राजेंद्र से मुक्त कर लेना है। ''[12] मन्नू भंडारी ने राजेंद्र से यादव का तलाक देने का निर्णय ले लिया। अपना निर्णय सबको बता दिया। राजेंद्र बदनामी के कारण परेशान हो गए। उनको लगा कि अब संबंध टूट ही जाएँगे। राजेंद्र यादव संबंध तोडना चाहते थे, न मन्नू को छोडना चाहते थे। राजेंद्र ने मन्नू भंडारी से बडी विनम्रता से कहा, ''मन्नू यह मेरे जीवन का सबसे बडा स्पॉट है... तुम ही मुझे इससे उबार सकती हो.... देखो, तुम मुझे छोडकर मत जाना .... तुम मुझे छोडकर नहीं जाओगी। [13]

जब–जब मन्नू भंडारी ने राजेंद्र को छोडने का निर्णय लिया, तब – तब वे इतने कायर होते रहे कि मन्नू भंडारी को अपना निर्णय बदलना पडा।

हर स्त्री विवाह के संदर्भ में अनेक सपने देखती है। अपने जीवन साथी के संदर्भ में सपने देखती। सांसारिक जीवन सुख से बिताने की अपेक्षा रखती है। पर हर स्त्री के सपने पूर्ण होते ही है, ऐसा नहीं है। विवाह के उपरांत हर स्त्री का सांसारिक जीवन सुखी होता ही है, ऐसा भी नहीं है। ऐसी अनेक विवाहित स्त्रियाँ हैं, जिनका जीवन नरकमय बन जाता है। जीवन साथी के संदर्भ में देखे हुए सपने टूट जाते है। मन्नू भंडारी ने भी वैवाहिक जीवन को लेकर अनेक सपने देखे थे। अपने सपनों के संदर्भ में वह लिखती है,''बहुत सपने देखे थे इस जिंदगी को लेकर, बहुत उमंग भी थी, लेकिन जल्दी ही राजेंद्र की लेखकिय अनिवार्यताओं और इस जीवन से मेरी अपेक्षाओं का टकराव शुरू हो गया जो फिर कभी समय पर आया ही नहीं।''[14] हमेशा विवाह एक रूचि एक पेशा समाज,संस्कृति समाज स्वभाव को देखकर ही किया जाता है। अगर लडका डॉक्टर है तो लडकी भी डॉक्टर देखी जाती है। लडका अध्यापक है तो लडकी अध्यापिका हो ऐसा सोचा जाता है। यह माना जाता है कि पेशा समाज हो तो दोनों का जीवन सुखमय होगा। पर दोनो पति पत्नी डॉक्टर हो, अध्यापक हो या लेखक हो तो दोनों का जीवन सुखमय ही होगा इसकी गारंटी है। वह एक लेखक है और राजेंद्र भी लेखक हैं, इसी कारण तो उसने राजेंद्र के साथ विवाह किया था। पर जीवन में क्या वह सुखी हो पायी। इस संदर्भ में वह लिखती है, '' सब लोग सोचते थे और मुझे भी लगता था कि एक ही रूचि .... एक ही पेशा ... कितना सुगम रहेगा जीवन मुझे अपने लिखने के लिए तो जैसे राजमार्ग मिल जाएगा, लेकिन एक ही पेश के दो लोगो का साथ जहाँ कई सुविधाएँ जुटाता है, वहीं दिक्कतो का अंबार भी लगा देता है, कम से कम मेरा तो यही अनुभव है।''[15]

विवाह केवल दो शरीरों का मिलन ही नहीं होता, दो दिलों का मिलन भी होता है। एक दूसरे को समझना एक दूसरे का सुख – दुख बाँटना होता है। जिम्मेदारियों को बाँटना होता है। पर क्या सभी पति–पत्नी एक दूसरे को समझ लेते हैं, एक दूसरे की भावना की कद्र करते है एक दूसरे का सुख – दुख बाँट लेते हैं,

घर की सारी जिम्मेदारी आधी – आधी बाँट लेते है। मन्नू भंडारी लिखती है, अब तक घर की किसी तरह की कोई जिम्मेदारी मैंने भी नहीं उठाई थी, लेकिन मानसिक रूप से मैं उसके लिए पूरी तैयार होकर आई थी।... केवल तैयार ही नहीं, भरपूर उमंग और उत्साह भीं था ...... साथ ही यह उम्मीद और आश्वासन भी कि सहजीवन के सुख दुख और जिम्मेदारियाँ भी मिल बाँटकर ही उठाएँगे।''[16] पर घर की सारी जिम्मेदारी राजेंद्र ने मन्नू भंडारी पर डाल दी। घर की सारी समस्याएँ भी मन्नू भंडारी के सर ही आ गई। वह यह चाहती थी कि घर की जिम्मेदारियाँ और समस्याओं में पति दिलचस्पी ही नहीं ईमानदारी से सहयोग भी दे। हर सुख – दुख में साथ दें। हर मुसीबत का सामना करने की हिम्मत दे। हर दुख और पीडा को बाँट लें। पर राजेंद्र ने न आर्थिक समस्याएँ बाँटी,न घर की जिम्मेदारी राजेंद्र ने मन्नू का न सुख में साथ दिया, न दुख में। एक दिन मन्नू भंडारी के मुँह में ऊपर के तालू पर एक छाला हो गया था। तीन दिन के बाद वह अच्छे धाव में बदल गया। खाना तो क्या पानी पीना भी मुश्किल हो गया था। वह तडफ रही थीं। उसे डॉक्टर के पास जाना था। उसे लगा राजेंद्र उसे अस्पताल में लेकर जाएँगें। पर राजेंद्र तो तैय्यार होकर काफी हाउस के निकल पडे। मन्नू घर में तडपती रही। प्रतिभा बहन और नारायण साहब मन्नू को अस्पताल ले गए। राजेंद्र रात के साढ़े दस बजे घर पर आए। जब मन्नू पेट से थी। बच्चा होने को कुल दो महीने बचे थे। राजेंद्र यादव मन्नू भंडारी को सुशिला के घर छोडकर रानीखेत चले गए थे। बच्चे के जन्म को यह पत्नी का काम और सुशीला की जिम्मेदारी समझकर मात्र तटस्थ ही नहीं रहें, इन सबसे उदासीन भी रहें। ऐसा गैर जिम्मेदार पति मिलें तो कौन स्त्री सुखी रह सकती है।

मन्नू भंडारी के पास प्रतिरोध का एक ही हथियार था उनकी जुबान गुस्से में आकर वह कहनी – अनकहनी सब सुना देती थी। राजेंद्र चुपचाप सुनते रहते। मन्नू भंडारी लिखती है, ''तब बार – बार मन में यही प्रश्न उठता था कि क्यो नही मैं ही इन समानांतर जिंदगियों की छत भी समांतर करके पहलेवाले जिंदगी में लौट जाऊँ? पर अपने प्रति हजार – हजार धिक्कार उठने के बावजूद में ऐसा कोई निर्णय ले नहीं पाई।''[17] एक दो बार तो कुछ ऐसी घटना घर में हुई कि स्थिति मन्नू भंडारी की सहनशक्ती के बाहर हो गई। उसने राजेंद्र से अलग होने का निर्णय ले लिया। पर राजेंद्र बडे नाटकी थे। उन्होंने अपने – आपको ऐसा कातर बना दिया कि मन्नू का सारा आक्रोश छू मंतर हो गया । क्रांतीकारी मन्नू भंडारी अपने निर्णय पर क्यो अटल नहीं रह पा रही थीं। क्या कारण था मन्नू भंडारी राजेंद्र की आँखों में आँसू देख ही नहीं पाती थी। इसका कारण बतलाते हुए मन्नू भंडारी लिखती है, ''क्या मेरी रगो में एक समय खून की जगह लावा बहा करता था, अब पानी बहने लगा है? या कि दो वर्ष की मित्रता में मैं राजेंद्र से इतने गहरे जुड गई थी कि उनको नकार देना मुझे अपने आप को नकार देने जैसा लगने लगा था।......... या कि पिताजी की इच्छा के विरूद्ध अपनी इच्छा से की हुई शादी को मैं किसी भी कीमत पर असफल नहीं होने देना चाहती थी।''[18] जब ॲरेंज मैरेज होता है और पति अच्छा न मिले तो लडकियाँ माँ बाप को दोष देती हैं, पर जब वह अपने मन से प्रेम विवाह करती हैं, अपने मन से अपना जीवन साथी चुनती हैं और जीवन साथी अच्छा न निकले तो वह किसी को भी दोष नहीं दे सकती। अपने आपको कोसते हुए विवाह विच्छेद न हो इसलिए चुपचाप सहती रहती हैं। वह हमेशा यह दिखाने का प्रयास करती हैं कि मैंने जो निर्णय लिया है वह सही है। मन्नू भंडारी का भी राजेंद्र को न छोडने का शायद यही कारण होगा।

राजेंद्र पुरूषी मानसिकता से ग्रस्त थे। वे अहंवादी भी थे। उन्होंने अपनी पत्नी को सताने का एक मौका भी नहीं छोडा। घर और बाहर की सारी जिम्मेदारी अपनी पत्नी पर छोडकर वे पहाडो पर जाकर अपनी प्रेमिका के साथ गुलछर्रे उडाते रहे और पत्नी बेचारी परिवार के लिए खपती रहीं। मन्नू भंडारी अपनी पीडा के संदर्भ में लिखती हैं, ''मेरी यातना तो दोहरी थी। भीतर से कोई संबंध नहीं संवाद नही राजेंद्र अपने कमरे में, मैं अपने कमरे में लेकिन बाहर सबके बीच बिलकुल सहज सामान्य स्थिति का भ्रम बनाए रखने की मशक्कत।''[19] मन्नू भंडारी की जिंदगी जीने की सारी खुशफहमी को ध्वस्त करते हुए घर में कुछ ऐसा घटा कि अंततः मन्नू भंडारी को राजेंद्र से अलग होने का निर्णय लेना ही पड़ा। उसने राजेंद्र से स्पष्ट कहा कि ''बस, अब बहुत हुआ..... अब साथ चल पाना संभव हीं नहीं है।'' राजेंद्र जी आप एक महीने में अपने लिए किसी मकान की व्यवस्था कर लीजिए क्योंकि अब मेरा आपके साथ रहना संभव नहीं है। अच्छा है, अलग रहेंगे तो आप भी ज्यादा स्वतंत्र रहेंगे और मैं भी ज्यादा तनावमुक्त।''[20]

साठ सत्तर के दशक में किसी पत्नी को अपने पति से कहना अब मैं तुम्हे छोड़ रही हूँ। आप यह घर छोडकर चले जाएँ। यह एक क्रांतीकारी कदम था। पुरूष ने तो सदियो से स्त्री को घर से निकाल दिया था। पर आज एक स्त्री पति को घर से निकाल बाहर करे या बहुत हुआ तो ऐसा निर्णय दोनों की सहमति से हो। केवल पत्नी अपनी इच्छा और पहल पर ऐसा निर्णय ले ले और पुरूष उसे सहज भाव से स्वीकार कर ले यह तो स्त्रियों की बराबरी का दावा करनेवाले... उनके अधिकारों का डंका पीटनेवालों के लिए भी संभव नहीं था।'' [21] ऐसा निर्णय मन्नू भंडारी केवल इस कारण ले पायी की वह स्वावलंबी थी। घर की मालकिन थीं। घर को वह अपने पैसों से चलाती थी। घर की स्वामी होने के कारण, स्वतंत्रता होने के कारण वह यह निर्णय निडरता से ले पाई। उनका यह कदम स्त्रियों के लिए एक आदर्श था और पतियों के लिए खतरे की घंटी। मन्नू भंडारी का यह निर्णय सुनकर मित्रों और रिश्तेदारों में हलचल मच गई। सभी के लिए एक स्त्री द्वारा लिया गया यह निर्णय अलग ही था। कमलेश्वर जी ने राजेंद्र को बार बार समझाया कि तुम अगर मन्नू से विच्छेद नहीं चाहते तो तुम्हे उन कारणों को तो दूर करना ही होगा जिन कारणो से मन्नू ने यह निर्णय लिया है। लेकिन राजेंद्र तो जिंदगी को अपनी शर्ती पर जीना चाहते थे। पर अपनी पत्नी से यह अपेक्षा रखते थे कि वह उनकी हर बात को सहज भाव स्वीकार करें। गिरिराज किशोर और बास चटर्जी ने भी मन्नू जी को समझाने का प्रयास किया। वह इस बार अपने निर्णय पर अटल थी। उसने बासुदा से हाथ जोडकर कहा, '' नहीं बासुदा और अब नहीं। जब तक मैं साथ निभा सकती थी। निभा दिया....... जब तक मैं बर्दाश्त कर सकती थी कर लिया लेकिन अब और नहीं।''[22] अब तक एक पत्नी होने के नाते मन्नू जी ने राजेंद्र का सबकुछ सहा। उनसे जुडी रही। इस आशा से कि एक न एक दिन राजेंद्र में परिवर्तन होगा। वे बदल जायेंगे। हमारा सांसारिक जीवन आसान होगा वह लिखती हैं''नहीं जानती इसे अपना धैर्य कहूँ.... बेशर्मी या कौन जाने मेरे मन में राजेंद्र के प्रति लगाव के कुछ ऐसे सूत्र बचे थे, जो इतना सब बर्दाश्त करने के बाद भी टूटते नही थे और मैंने राजेंद्र के साथ एक निहायत ही असंतुलित जिंदगी जीते हुए पूरे तीस साल गुजार दिए।'' [23] इसी कारण तो राजेंद्र को यह विश्वास हो गया था कि वह अपनी पत्नी से कैसा भी बर्ताव करें, वह उसे छोड नहीं सकती। वह उनके साथ लडेगी – झगडेगी पर उनको घर से कभी नहीं निकालेगी। पर आखिर राजेंद्र को घर छोडकर जाना ही पडा। पर छह महीने के बाद राजेंद्र अपना सामान लेकर वापस आ गए। भारतीय पत्नी होने के नाते मन्नू जी भी उनको रोक नहीं पायी। वह इस संदर्भ में लिखती हैं,''नहीं जानती कि यह मेरी कमजोरी थी या मेरा संस्कार या कहीं ऐसा तो नहीं कि मेरे भीतर भी यह उम्मीद जग गई हो कि इस घटना के बाद शायद उन्हें अपनी गलतियों का अहसास हो और ये .... पर नहीं, ऐसा कुछ नहीं हुआ था। होता तो हमारे आपसी व्यवहार में कुछ बदलाव आया होता।''[24]

तीस साल तक मन्नू भंडारी मानसिक तनाव में जीती रहीं। मानसिक तनाव का शरीर पर परिणाम तो होना ही था। सन 1980 में मन्नू को न्यूरोलाजिक का पहला अटॅक आ गया। इस बिमारी का दुनिया भर में कोई इलाज ही नहीं था। डॉक्टर ने बता दिया था कि तनावमुक्त रहना ही इस बिमारी से बाहर आने का सबसे अच्छा रास्ता है। राजेंद्र से साथ रहकर तनावमुक्त रहना संभव ही नहीं था। मन्नू जी सोचती है, ''कैसे मुक्त हो पाऊँ मैं इन तनावों से? इसमें कोई संदेह नहीं कि स्वभाव से ही मैं बहुत तनाव ग्रस्त हूँ लेकिन यदि अनुकूल परिस्थितियाँ मिलती .... अपनत्व भरा साथ मिलना तो निश्चित रूप से सारे तनाव ढीले ही नहीं होते बल्कि समाप्त ही हो जाते। पर मुझे जो साथ मिला उससे मुझे न कोई सहयोग मिला, न स्नेह, अगर कुछ मिला तो केवल जिम्मेदारियों का अनवरत बोझ और असह्य यातनाएँ।''[25]

भारतीय स्त्री जिम्मेदारी उठाने में कभी नहीं हटती आदि से आज तक स्त्रियों ने ही तो घर और बाहर की जिम्मेदारियाँ उठाई है। आज की स्त्री तो घर परिवार के अतिरिक्त न जाने कितनी जिम्मेदारियाँ उठाती है। उसमें अपनी ऊर्जा खर्च करती है। कभी थकती ही नहीं। थकती भी होगी तो भी किसी से शिकायत नहीं करती। अगर उसे अपने साथी का सहयोग मिले, प्यार मिले तो पलभर में उसकी थकावट चली जाती है। मन्नू जी भी अपने परिवार के लिए रात–दिन खपती रही। छुट्टियों में भी ट्यूशन लेती रहीं। दूरदर्शन पर भी काम करती रहीं। पर उसे अपने पति से न कभी सहयोग मिला न प्यार। मन्नूजी लिखती है,'' मेरे साथ क्या हुआ कि मैं सिर्फ खर्च ही करती रही और एक स्थिती ऐसी आयी कि मैं बिल्कुल खाली खोखली हो गई... रोगग्रस्त शरीर. ..निष्क्रिय जीवन और खंडित आत्मविश्वास की किरणों में लिपटा व्यक्तित्व मेरे मित्रों, परिवारवालों, परिचितों का स्नेह ही मुझे थामे रहा........... वरन कोई आश्चर्य नहीं कि मैं, लगभग टूट ही जाती।''[26]

राजेंद्र नौकरी नहीं करते थे। मन्नू नौकरी करके घर का सारा घर खर्चा करती थी। अब बेटी भी तीन साल की हो गई थी। उसे संभालते का सबसे बडा प्रश्न निर्माण हो गया था। मन्नू चाहती थी कि राजेंद्र तो घर पर ही रहते हैं। उन्होंने रचना को संभालना चाहिए। पर राजेंद्र पुरूषी मानसिकता से ग्रस्त थे। वे यह मानते थे कि बच्ची को संभालना, घर का काम करना, सबकी सेवा करना यह तो घर की औरतों का ही काम है। अगर पत्नी नौकरी करे और राजेंद्र घर में बेटी को संभाले तो लोग कहेंगे क्या आयागिरी कर रहा है।' किसी भी सूरत में मित्रों का यह कहना राजेंद्र सह नहीं सकते थे। जैसे यह विधि लिखित ही है कि घर का काम और बच्चो को संभालने की जिम्मेदारी औरत की ही है। मन्नू जी लिखती है, ''कई बार मन होता की पुछूँ कि ''माँ अगर बच्चे को रखे तो माँ अगर बाप बच्चे को रखे तो वह बाप होकर आया कैसे हो गया।'' [27] भारतीय पुरूषों की यह मानसिकता रही है कि जब भी वह किसी मुसीबत में फँस जाता है या उसके सामने कोई गंभीर समस्या निर्माण हो जाती है या वह किसी काम में असफल हो जाता है तो इसका जिम्मेदार वह अपनी पत्नी को ही ठहराता है। सारा दोष अपनी पत्नी के माथे पर थोप देता है। राजेंद्र यादव भी जब जब मुसीबत में फँस गए, समस्याओं में घिरे गये तो इसका जिम्मेदार मन्नू जी को ही ठहराते रहे। मन्नू जी लिखती है, अपनी प्रतिभा, क्षमता, योग्यता के प्रति पूरी तरह अस्वस्थ होने के बावजूद इस स्थिती के कारण व बेहद फ्रस्ट्रेटेड महसूस करते थे और जब तब इसका दंश मुझे ही झेलना पडता था। कारण कुछ भी हो, कठघरे में तो मुझे ही खडा किया जाता था और बिना शब्दो के प्रहार करने की कला से मैं चाहे कितना भी अनभिज्ञ होऊँ आहत तो मैं ही होती थी।''[28] राजेंद्र के मन में मन्नू को लेकर कुंठा थी। इसी कुंठा का परिणाम मन्नू के साथ सारे परिवार को भोगना पडता था।

1991 में मन्नू भंडारी सेवा निवृत्त हो गई। विष्णुकांत शास्त्री ने उनकी चयन 'प्रेमचंद सृजनपीठ के निर्देशक के पद पर किया। इसका कार्यालय उज्जैन में था। मन्नू भंडारी ने वह पद स्वीकारने का निर्णय लिया। इसकी कानोकान खबर राजेंद्र जी को नहीं थी। राजेंद्र को न पूछते हुए मन्नू जी ने यह निर्णय लिया था। आज तक मन्नू जी ने अनेक महत्वपूर्ण निर्णय राजेंद्र को पूछकर ही लिए थे। यह एक निर्णय बिना पूछे मन्नू ने लिया तो राजेंद्र जी आहत हुए। मन्नू जी लिखती है,''पर मुझे न इनका आहत होना परेशान कर रहा था, न ही इनकी मायूसी विचलित, बल्कि ईमानदारी की बात तो यह है कि मुझे उस समय बडा संतोष मिल रहा था। आनंद आ रहा था .... समझ लों कि बिना कुछ कहे बनाए मनमाने ढंग से अपने निर्णय लेने का अधिकार केवल तुम्हें ही नहीं है।''[29] मन्नू जी का यह क्रांतीकारी निर्णय था। इसके बाद उन्होंने जो भी निर्णय लिए स्वयं को अच्छे लगे इसलिए लिए।

मनुष्य जवान होता है तब उसे पत्नी की आवश्यकता महसूस होती है न उसका महत्व समझ में आता है। वह अपनी ही धुन में जीवन जीता रहता है। अपने जवानी के दिनो में उसे घरवाली से बाहरवाली अधिक प्रिय लगती है। बिमारियाँ उसकी ओर बढ़ने लगती है, तब उसे बाहरवाली से अधिक घरवाली का अधिक महत्व समझ मैं आने लगता है। राजेंद्र जी की भी उमर ढलने लगी थी। इस बार साडे तीन साल तक बाहर रहे थे। साडे तीन साल तक मन्नू जी ने उन्हे घर में आने ही नही दिया। उम्र के इस पडाव पर आकर उनको भी हर कीमत पर घर और पत्नी की आवश्यकता महसूस हो रही थी। मन्नू जी ने जन्मदिन पर बिना सूचना दिए टिंकू और दिनेश के साथ प्रकट हो गए। मन्नू लिखती है, ''मैं हैरान ....हैरान ही नहीं, आत्मीयता का भूखा मेरा मन सचमुच विभोर हो गया था उस दिन।''[30]

यह केवल राजेंद्र की ही अवस्था नहीं थीं। हर साहित्यकार की यह अवस्था उम्र के ढलान पर हो गई थी। मन्नू जी के एक मित्र ने एक बार कहा था, ''मन्नू इसमें कोई शक नहीं कि मैं कई औरतो के साथ सोया हूँ? पर आज? आज तो बस मेरे लिए जो भी है मेरी पत्नी ही है। आज तो यही मेरी मित्र है, प्रेयसी है, प्रेमिका है।''[31] हिंदी की श्रेष्ठ साहित्यकार जैनेंद्र की पत्नी मर जाने के कुछ दिन बाद मन्नूजी उनसे मिलने उनके घर गई थी। तब अस्वस्थ होकर उन्होंने कहा था, ''जानती हो मन्नू वो जब थी, तो कभी दिखाई देती है। अब उसके बिना कुछ सूझता ही नही।''[32] अंतिम पडाव में पति से पहले जब पत्नी मर जाती है, तब पति अकेला हो जाता है। इस पडाव में उसे पत्नी की जरूरत होती है। पर वह अगर उसे छोडकर चली जाए तो, उसे पत्नी का महत्व समझ में आने लगता है और वह न होने का दुख भी सताता रहता है। यह अवस्था बुढापे में हर विधुर पति की होती ही है। मन्नू जी लिखती है, मैं सोच रही थी कि जब आप अपनी प्रेमिका के साथ मस्ती भरी रातें गुजारा करते थे...... उसकी राते कैसे आँसूओं में डूबी गुजरती होंगी? नहीं उस समय आपके लिए पत्नी

का कोई अस्तित्व ही नहीं रह गया होगा। पर आज उम्र के इस पडाव पर आपको उसकी जरूरत है तो केवल अपनी देखभाल के लिए.........अपनी सेवा .... सुश्रषा के लिए हो गई।''[33]

पतिद्वारा पीडित पत्नियों की संख्या अनगिनत है। केवल अनपढ गरीब या घरेलु काम करनेवाली स्त्रियों का ही शोषण नहीं होता उच्च शिक्षित नौकरीपेशा स्त्रियाँ भी पतिद्वारा पीडित है। लेखकों की पत्नियाँ तो अधिक पीडित है। लेखक को तो बडा संवेदनशील प्राणी माना जाता है। किसी का भी दुख देखकर वह दुखी होता है। फिर उसे अपनी पत्नी का दुख क्यों नहीं दिखाई देता। मन्नू भंडारी लिखती है, ''नहीं जानती इसे पत्नियों के जीवन की विडंबना कहूँ या लेखकों के जीवन की .... पर है यह इतनी बडी सच्चाई जिसे झेलने भोगने के लिए हर लेखक की पत्नी तो अभिशप्त है ही। पर साठ साल की उम्र पार करते ही ये चिर उपेक्षित पत्नियाँ उनकी जिंदगी की अनिवार्यता बन जाती हैं।''[34]

मन्नू भंडारी ने राजेंद्र को अनेक बार माफ किया, इस आशा से की इनके व्यवहार में स्वभाव में परिवर्तन आएगा। पर कुछ दिन राजेंद्र अच्छे रहते. फिर उनको झटका आता और वे पहले जैसा ही रहने लगते। इनके इस व्यवहार से मन्नूजी के मन में इनके, प्रति वितृष्णा के साथ साथ एक गहरी नफरत भी भर गई थी। वह अपने पुराने निर्णय पर लौट आई। फिर उसने आदेश दिया। ''बस और अब एक दिन भी नहीं। पहले की तरह अब आप इस घर में लौटने की कोशिश भी मत करना। बार–बार का यह तमाशा मेरे लिए असह्य हो गया है। जल्दी से जल्दी घर ढुँढिये और हमेशा के लिए शिफ्ट हो जाए।'[35] आज सोलह साल से मन्नू राजेंद्र से अलग रह रही है। अब तो एक साल पूर्व राजेंद्र भी नहीं रहे। जब कोई स्त्री प्रेमविवाह करके अपने माता – पिता को छोडकर प्रियकर के साथ विवाह करती है, तो उसे माता–पिता के छोड़ने की पीड़ा तो होती ही है। पर पति को छोड़कर जब वह अलग रहने लगती है, तो वह पीड़ा अधिक भयानक होती है। माता – पिता को छोडने के बाद उसे पति का सहारा मिलता है। उसे प्रेम भरे सहारे से वह अपने माता – पिता के प्रेम को भी भूल जाती है। पर जब उसे पति का साथ छोडना पडता है तब वह अकेली हो जाती है। राजेंद्र को हमेशा के लिए छोडने के बाद मन्नू जी की भी यही अवस्था हो गई थी। अपनी मानसिकता का चित्रण वह इस प्रकार करती है, '' इसमें कोई संदेह नही कि मैं आज बिल्कुल अकेली हो गई हूँ.... पर राजेंद्र के साथ रहते हुए भी तो मैं बिल्कुल अकेली ही थी। आज सारे तनावों से मुक्त होने के बाद अकेले रहकर भी अकेलेपन महसूस ही नहीं होता। आज कम से कम अपने साथ तो हूँ।''[36] अगर पति – पत्नी के साथ रहने से सुख न मिलता हो, सुख से अधिक दुख या पीडा ही होती हैं, तो दोनों का एक दूसरे से अलग ही होना चाहिए। अलग अलग रहकर अपना अपना सुख तलाशना चाहिए। विवाह विच्छेद के बाद भी यह दोनों आपस में मिलते रहे, फोन पर बात करते रहे, पर साथ कभी नहीं रहे। क्योकि अब इस संबंध में वह मधुरता नहीं थी। उनके संबंधो के बारे में मन्नू कहती है, ''आज मेरे और राजेंद्र के संबंधो के बारे में कोई पूछे तो में कहूँगी, शत्रूता नहीं, बिल्कुल नहीं। कटुता झूठ बोलूंगी यदि कहूँगी बिलकुल नहीं, क्योंकि अतीत की कोई घटना अगर कभी मन में उभर आए या वर्तमान में ही राजेंद्र द्वारा जब तक कही जानेवाली कुछ बातें याद आनेवाली कुछ हरकते आज भी मन में कटुता तो ले ही आती है। पर यह स्थायी भाव बिल्कुल नही है। .... बस उभरी और थोडे समय बाद ही बिला भी गई। सहमी मुश्किल से पाँच सात प्रतिशत बातों में ही हम सहमत हो पाते है। मित्रता नहीं मित्रता में जो एक तरह की अंतरंगता निहित रहती है, वह हमारे बीच नही है आज हमारे दोनो के बीच अगर कुछ है तो निरंतर चलनेवाला एक निहायत औपचारिक संवाद........... सूचनाओं और कह–बाँट सकनेवाली निहायत छोटी – छोटी समस्याओं का आदान – प्रदान और समाधान।''[37]

मन्नू भंडारी लगभग तीस साल तक राजेंद्र के साथ रहीं। राजेंद्र के द्वारा दी गई पीडा को झेलती रहीं। बीच – बीच में कुछ साल तक अलग रहीं। पर जब भी राजेंद्र माफी माँगते हुए घर में प्रवेश कर लिया, उसे कभी नहीं रोका। एक शोध छात्रा ने मन्नू जी से सवाल किया कि, ''राजेंद्र ने जो किया सो किया पर आप क्यों नही अलग हो गई? हो सकता है कि आप भी एक यशस्वी प्रतिभाशाली लेखक के मोह से मुक्त न हो पाई हों? इस प्रश्न को सुनकर मन्नू जी थोडा अस्वस्थ हो गई। स्वस्थ होकर वह कहती है, ''यह मेरा मोह ही था ..... एक गहरा लगाव, पर व्यक्ति राजेंद्र के प्रति, जिसमें उनका लेखक होना शुमार था, यशस्वी होना कतई नहीं। उनका यश चाहे जितना फैला हो और जहाँ जहाँ तक फैला हो मैनें उस यश की सीढी चढकर न तो अब तक अपने लिए कुछ पाया है, न चाहा है।''[38] यह बात सही है। मन्नू ने जो भी रचना लिखी और वह छपकर आई। प्रकाश कों और पाठको ने उनका बडा गुनगान गाया। मन्नू जीं के अधूरे उपन्यास को 1 जनवरी 1961 में दोनों

का सहयोगी उपन्यास 'एक इंच मुस्कान' ज्ञानोदय में छपना शुरू हुआ पहला अध्याय राजेंद्र का छपा और दूसरा मन्नू जी का। दूसरा अध्याय छपने के कुछ दिनों बाद ज्ञानोदय के संपादक शरद देवडा कुछ पत्र लेकर मन्नू जी के घर आए और बोले 'क्या बताऊँ राजेंद्र जी, पहले अध्याय पर तो कोई पत्र आए ही नहीं........... सिवाय इस प्रयोग को लेकर अब देखिए मन्नू जी के अध्याय पर कितने प्रशंसात्मक पत्र आए हैं। इस वाक्य से राजेंद्र के अहं को चोट पहुँची राजेंद्र ने देवडा जीं को चितंन गंभीरता है, कहा, 'देखा देवडाजीं एक बात अच्छी तरह समझ लो की मेरे लेखन में गंभीरता है गहराई है............. तुम क्या सोचते हो...। बात को बीच में ही काटकर देवडा जी बोले, 'देखिए राजेंद्र जी मैं संपादक हूँ, सो मेरा एक अनुरोध है आपसे कि आपको यह चिंतन पाठको की चिंता न बन जाए कहीं।''[39] मन्नू जी लिखती हैं, ''सन 1970 में 'आपका बंटी धारावाहिक रूप से छपना, सन 1982 में 'महाभोज' के मंचन ने मेरे नाम की काफी धूम मचा दी थी। वह भी केवल अपने बलबुते पर। नाटक,फिल्म जिस दिशा में भी कदम बढाया सफलता ही मिली........। दो बार जर्मनी से निमंत्रण मिला लेकिन वह भी बिलकुल बिलकुल अपने बलबूते पर ही। [40]

पर यह बातें भी सही है कि राजेंद्र का प्रभाव मन्नू जी पर था। उन्होंने इसे सहर्ष स्वीकारा भी है। राजेंद्र एक अच्छे लेखक थे इसिलिए तो मन्नू जी उनकी और आकर्षित हो गई, उनके साथ विवाह किया। वह स्पष्ट लिखती है, ''राजेंद्र के व्यक्तित्व का एक पक्ष जहाँ मेरी हीनता ग्रंथि परत – दर – परत चढाकर मेरे आत्म विश्वास को खंडित करता रहा, वहीं दूसरा पक्ष आत्मविश्वास अर्जित करने में सहायक ही नहीं रहा बल्कि लिखने के लिए मुझे बराबर प्रेरित प्रोत्साहित भी करता रहा है। मेरी कई कहानियो और दो उपन्यासों के शीर्षक भी राजेद्र ने ही रखे है। घर में नई से नई पुस्तकों और पत्रिकाओं का आना, सभी तरह के साहित्यकारों के जमावडे .... उत्तेजक .... बहसें..... गप्प गोष्ठियाँ मेरे लेखक के लिए बडा प्रेरक था यह वातावरण .... मेरा मूल प्रेरणा स्त्रोत।''[41] मन्नू राजेंद्र के साथ रहीं तो उनके प्रति लगाव के कारण ही और उनसे अलग हुई तो अपनी मुक्ति के लिए।

मन्नू भंडारी ने अनेक बार हमेशा के लिए राजेंद्र यादव से अलग होने का निर्णय लिया। पर उनसे वह अलग नहीं हो पायीं। उसे रचना नाम की एक बेटी थी। उस बेटी को माँ – बाप दोनों का प्यार मिलें, अच्छे संस्कार मिले, इस कारण वह राजेंद्र से अलग होने का निर्णय टालती रही। वह लिखती है,''टिंकू उस समय नौ वर्ष की थी और राजेंद्र के साथ रहना मेरे लिए कठिन से कठिनतर होता जा रहा था। पर जब भी मैं अलग होने की बात सोचती,टिंकू का चेहरा बंटी के चेहरे में जा मिलता और मेरा सारा सोच वही ध्वस्त हो जाता....... नहीं ....नहीं मैंने जो सहा सह लिया लेकिन टिंकू को मैं एक भरी –पूरी जिंदगी से वंचित नहीं करूँगी। टिंकू को मैंने बंटी तो नहीं बनने दिया पर उससे मुझे उपन्यास लिखने के लिए एक तरह से विवश ही कर दिया।''[42]

हर पत्नी ऐसा पति चाहती है, जो उसकी इज्जत करे, उससे प्यार करे, उसकी मदद करे उसका कहना माने, उसको एक मनुष्य समझे, एक दोस्त के रूप में उसके साथ रहे। पर सभी पत्नियों को मनचाहे पति नहीं मिलते। राजेंद्र यादव लिखते है,''मन्नू उन्ही लोगों से मेरा मिलना जुलना पसंद करती, जो गृहस्थ हो, सज्जन हो, पत्नियों का हर कहना मानता हो उसके साथ बाजार जाकर बेड कवर, क्रॉकरी, साडी पर्दे लाते हो। कभी अकेले बाहर घूमने न जाते हों और सिनेमा के पास से तो बिना पत्नी को साथ लिए निकलते भी न हो। ठीक साढे पाँच बजे घर आते हो।''[43] राजेंद्र तो बिलकुल ऐसे थे। जो मन में आया करते थे। ऐसे पति के साथ मन्नू जी कैसे खुश रहती।

संदर्भ सूची:

1. मन्नू भंडारी – एक कहानी यह भी, पृ.7
2. वही पृ.8
3. वही, पृ.17
4. वही, पृ.20
5. वही, पृ.18
6. वही, पृ.23
7. संपा.– किशोर सिंहराव। डॉ. मीरा सक्सेना – मन्नू भंडारी का कथा साहित्य लेख – डॉ.किशोरराव – लेखनविषयक मन्नू भंडारी की विचारधारा, पृ.69

8. पृ. 99
9. मन्नू भंडारी – एक कहानी यह भी, पृ.21.22
10. वही, पृ.22
11. वही, पृ.23
12. वही, पृ.24
13. माधुरी वाजपेयी – उपन्यासकार मन्नू भंडारी, पृ.11
14. मन्नू भंडारी – एक कहानी यह भी, पृ.209
15. वही, पृ.212
16. वही, पृ.213
17. वही, पृ.213
18. वही, पृ.56
19. वही, पृ.56
20. वही, पृ.56
21. वही, पृ.60
22. वही, पृ.60
23. वही, पृ.171
24. वही, पृ.171
25. वही, पृ.172
26. वही, पृ.173
27. वही, पृ.173
28. वही, पृ.174–175
29. वही, पृ.177
30. वही, पृ.177
31. वही, पृ.74
32. वही, पृ.96
33. वही, पृ.181
34. वही, पृ.193
35. वही, पृ.194
36. वही, पृ.195
37. वही, पृ.195
38. वही, पृ.196
39. वही, पृ.198
40. वही, पृ.199
41. वही, पृ.201
42. वही, पृ.222
43. वही, पृ.64